ओ३म्

<u>विचार व चिन्तन</u>

'ईश्वर व उसकी उपासना पद्धतियां – एक वा अनेक?'

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

मनमोहन कुमार आर्य

हम संसार में देख रहे हैं कि अनेक मत–मतान्तर हैं। सभी के अपने–अपने इष्ट देव हैं। कोई उसे ईश्वर के रूप में मानता है, कोई कहता है कि वह गाड है और कुछ ने उसका नाम खुदा रखा हुआ है। जिस प्रकार भिन्न–भिन्न भाषाओं में एक ही संज्ञा – माता के लिए मां, अम्मा, माता, मदर, मम्मी या अम्मी आदि नाम हैं उसी प्रकार से यह ईश्वर के अन्य–अन्य भाषाओं व उपासना पद्धतियों में ईश्वर के नाम हैं। क्या यह ईश्वर, God व खुदा अलग–अलग सत्तायें हैं? कुछ ऐसे मत भी हैं जो ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार ही नहीं करते तथा अपने मत के संस्थापकों को ही महान आत्मा मानते हैं जिनकी स्थिति प्रकारान्तर से ईश्वर के ही समान व ईश्वर की स्थानापन्न है। जहां तक सभी मतों का प्रश्न है, हमने अनुभव किया है कि सभी मतों के सामान्य अनुयायी अपनी बुद्धि का कम ही प्रयोग करते हैं। उन्हें जो भी मत के प्रवतर्कों व उसके नेताओं द्वारा कहा या बताया जाता है या जो उन्हें परम्परा से प्राप्त हो रहा है, उस पर आंखें बन्द कर विश्वास कर लेते हैं। उनकी वह आदत, कार्य व व्यवहार उनके अपने जीवन के लिए हानिकर ही सिद्ध होती है एवं इसके साथ यह देश व समाज के लिए भी अहित कर सिद्ध होती है। यहां यदि विचार करें तो यह ज्ञात होता है कि ईश्वर ने सभी मनुष्यों को बुद्धि तत्व लगभग समान रूप से दिया है। इस बुद्धि तत्व का प्रयोग व उपयोग बहुत कम लोग ही करना जानते हैं। आजकल बहुत से लोग ऐसे हैं जो विद्या का अध्ययन धनोपार्जन के लिए करते हैं। उनके जीवन का एक ही उद्देश्य है कि अधिक से अधिक धन का उपार्जन करना और उससे अपने व अपने परिवार के लिए सुख व सुविधा की वस्तुओं को उपलब्ध करना तथा उन सबका जी भर कर उपयोग करना। यह मानसिकता व सोच हमें बहुत ही घातक अनुभव होती है। एकमात्र धन की ही प्राप्ति में मनुष्य अपने जीवन के उद्देश्य को भूलकर उससे इतनी दूर चला जाता कि जहां से वह कभी लौटता नहीं है और उसका यह जीवन एक प्रकार से नष्ट प्रायः हो जाता है।

हम यह मानते हैं कि धन की जीवन में अत्यन्त आवश्यकता है परन्तु जिस प्रकार से हर चीज की सीमा होती है उसी प्रकार से धन की भी एक सीमा है। उस सीमा से अधिक धन, धन न होकर हमारे पतन व नाश का कारण बन सकता है व बनता है। इस धन को अर्थ नहीं अपितु अनर्थ कहा जाता है। जिस प्रकार से भूख से अधिक भोजन करने पर उसका पाचन के यन्त्रों पर कुप्रभाव पड़ता है उसी प्रकार से आवश्यकता से कहीं अधिक धन का उपार्जन व संचय, जीवन व उसके उद्देश्य की प्राप्ति पर कुप्रभाव डालता है। हमारे ऋषि–मुनि–योगी साक्षात्कृतधर्मा होते थे जिन्हें अपने ज्ञान व विवेक से किसी भी क्रिया के परिणाम का पूरा ज्ञान होता था। उन्होंने एक सूत्र दिया कि **जो व्यक्ति धन व काम की एषणा से युक्त है, उसे धर्म का ज्ञान नहीं होता।** धर्म का सम्बन्ध हमारे दैनिक कर्तव्यों एवं आचार, विचार व व्यवहार से होता है। दैनिक कर्तव्य क्या हैं यह आज के ज्ञानी व विद्वानों तक को पता नहीं है। इन दैनिक कर्तव्यों में प्रातः उठकर शारीरिक शुद्धि करके ईश्वर के गुणों व स्वरूप का ध्यान कर निज भाषा एवं वेद मन्त्रों से अर्थ सहित सर्वव्यापाक व निराकार ईश्वर प्रार्थना की जाती है। उसका धन्यवाद किया जाता है जिस प्रकार से हम अपने सांसारिक जीवन में किसी से कृतज्ञ होने पर उसका धन्यवाद करते हैं। ईश्वर ने भी हमें यह संसार बना कर दिया है। हमें माता–पिता–आचार्य–भाई–बहिन–संबंधी–मित्र–भौतिक सम्पत्ति–हमारा शरीर–स्वास्थ्य आदि न जाने क्या–क्या दिया है। इस कारण वह हम सब के धन्यवाद का पात्र है। इन्हीं सब बातों पर विचार व चिन्तन करना, ईश्वर के गुणों व उपकारों का चिन्तन व ध्यान करना ही ईश्वर की उपासना कहलाती है। इससे मनुष्य को अनेक लाभ होते हैं। इससे निराभिमानता का गुण प्राप्त होता है। निराभिमानता से मनुष्य अनेक पापों से बच जाता है। दूसरा कर्तव्य यज्ञ व अग्निहोत्र का करना है। तीसरा कर्तव्य माता–पिता आदि के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन है जिससे माता–पिता पूर्ण सन्तुष्ट हों। इसे माता–पिता की पूजा भी कह सकते हैं। इसके बाद अतिथि यज्ञ का स्थान आता है जिसमें विद्वानों व आचार्यों का पूजन अर्थात् उनका सम्मान व उनकी आवश्यकता की वस्तुएं उन्हें देकर उनको सन्तुष्ट करना होता हैं। अन्तिम मुख्य दैनिक कर्तव्य बलिवैश्वदेव यज्ञ है जिसमें मनुष्येतर सभी प्राणियों मुख्यतः पशुओं व कीट–पतंगों को भोजन कराना होता है।

हम बात कर रहे थे कि अनेकानेक मतों में अपने अपने गुरू व अपने–अपने भगवान हैं। सबकी पूजा पद्धतियां अलग–अलग हैं। क्या वास्तव में ईश्वर भी अलग–अलग हैं व एक है? यदि एक है तो फिर सब मिलकर उसके एक सत्य स्वरूप का निर्धारण करके समान रूप से एक ही तरह से पूजा या उपासना क्यों नहीं करते? इसका उत्तर ढूढंना ही इस लेख का उद्देश्य है। ईश्वर केवल एक ही है, पहले इस पर विचार करते हैं। संसार में ईश्वर वस्तुतः एक ही है। एक से अधिक यदि ईश्वर होते तो न तो यह संसार बन सकता था और न ही चल सकता है। हम एक उदाहरण के लिए एक बड़े संयुक्त परिवार पर विचार कर सकते हैं। यदि परिवार का एक मुख्या न हो, समाज का एक प्रतिनिधि न हो, प्रान्त का एक मुख्य मंत्री न हो और देश का एक प्रधान न होकर अनेक प्रधान मंत्री हों तो क्या देश कभी चल सकता है? कदापि नहीं। आज हमारे देश में जितने राजनैतिक दल हैं, यदि सभी दलों के या एक से अधिक दलों के दो–चार या छः प्रधान मंत्री बना दें तो देश की जो हालत होगी वही एक से अधिक ईश्वर के होने पर इस संसार या ब्रह्माण्ड की होने का अनुमान आसानी से कर सकते हैं। हम पौराणिक भगवानों को देखते हैं कि पुराणों की कथाओं में उनमें परस्पर एकता न होकर कईयों में इस बात का विवाद हो जाता है कि कौन छोटा है और कौन बड़ा है। वैष्णव स्वयं को शैवों से श्रेष्ठ मानते हैं और शैव स्वयं को वैष्णवों से श्रेष्ठ। अतः हमें हमारे प्रश्न का उत्तर मिल गया है कि संसार व ब्रह्माण्ड केवल एक सर्वव्यापक, चेतन सत्ता ईश्वर स`चल सकता है, उनके सत्ताओं से कदापि नहीं। संसार का रचयिता, संचालक, पालक व प्रलयकर्ता ईश्वर केवल एक ही सत्ता है जो पूर्ण धार्मिक और सब प्राणियों का सच्चा हितैषी है और वह माता–पिता–सच्चे आचार्य के समान सबके कल्याण की भावना से कार्य करता है।

अब उपासना पद्धतियों की चर्चा करते हैं। उपासना का अर्थ होता है पास बैठना। जैसे विद्यालय में एक कक्षा में विद्यार्थी अगल–बगल में बैठते हैं। जहां गुरू सामने बैठ या खड़ा होकर उपदेश दे रहा होता है तो वह गुरू–शिष्य एक दूसरे की उपासना कर रहे होते हैं। ईश्वर सर्वव्यापक होने से सबके पास पहले से ही उपस्थित व मौजूद है। उसे मिलने या प्राप्त करने के लिए कहीं आना–जाना नहीं है। हमारा मन व ध्यान सांसारिक वस्तुओं में लगा रहता है जिसका अर्थ है कि हम उन–उन सांसारिक वस्तुओं की उपासना कर रहे होते हैं। **यदि हम सभी सांसारिक विषयों से अपना मन व ध्यान हटाकर ईश्वर के गुणों व उसके स्वरूप में स्थिर कर लेते हैं तो यह ईश्वर की उपासना होती है। इसके अलावा ईश्वर की किसी प्रकार से उपासना हो नहीं सकती है।** योग दर्शन में महर्षि पतंजलि जी ने भी ईश्वर की उपासना का यही तरीका व विधि बताई है। ध्यान अर्थात् ईश्वर के स्वरूप वा उसके गुणों का विचार व चिन्तन ध्यान करलाता है जो लगातार करते रहने से समाधि प्राप्त कराता है। समाधि में ईश्वर के वास्तविक स्वरूप व प्रायः सभी मुख्य गुणों का साक्षात् व निर्भ्रान्त ज्ञान होता है। नान्यः पन्था विद्यते अयनायः, अन्य दूसरा कोई मार्ग या उपासना पद्धति इस लक्ष्य को प्राप्त करा ही नही सकती। **यही मनुष्य जीवन का और किसी जीवात्मा का परम लक्ष्य या उद्देश्य है।** अतः ईश्वर की पूजा, उपासना, स्तुति व प्रार्थना आदि सभी की विधि केवल यही है और इसी प्रकार से उपासना करनी चाहिये व की जा सकती है। बाह्याचार आदि जो सभी मतों में दिखाई देता है वह पूर्ण उपासना न होकर आधी–अधूरी व आंशिक उपासना ही कह सकते हैं जिससे परिणाम भी आधे व अधूरे ही प्राप्त होते हैं। अतः सभी मनुष्यों को चाहें वह किसी भी मत, धर्म, सम्प्रदाय या मजहब के ही क्यों न हों, सत्यार्थ प्रकाश, आर्याभिविनय एवं वेदादि सत्य शास्त्रों का अध्ययन, स्वाध्याय, विचार व चिन्तन करना चाहिये। यही ईश्वर की सही उपासना पद्धति है और इसी से ईश्वर की प्राप्ति अर्थात् साक्षात्कार होगा। **ईश्वर केवल एक ही है और नाना भाषाओं में उसके नाना व भिन्न प्रकार के नाम यथा, ईश्वर, राम, कृष्ण, खुदा व गौड आदि शब्द उसी के लिए प्रयोग किये जाते हैं।** ईश्वर का मुख्य नाम केवल एक है और वह है ''ओ३म्'' जिसमें ईश्वर के सब गुणों का समावेश है। इस ओ३म् नाम की तुलना में ईश्वर का अन्य कोई नाम इसके समान, इससे अधिक व प्रयोजन को प्राप्त नहीं कर सकता। **''ओ३म्''** का अर्थ पूर्वक ध्यान व चिन्तन करने से भी उपासना होती है और इससे समयान्तर पर मन की शान्ति सहित अनेकानेक लाभ होते हैं। रोगों का शमन व स्वास्थ्य लाभ भी होता है। इसी के साथ हम इस चर्चा को विराम देते हैं। पाठकों की निष्पक्ष प्रतिक्रियाओं का सदैव स्वागत है।

–मनमोहन कुमार आर्य
पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोनः 09412985121